ईश्वर का अस्तित्व (*Existence*)

हमें सत्यता की कसौटी मिल गई है और इसलिए हम सब प्रकार के प्रत्ययों (ideas*) की जाँच कर सकते हैं। भावनाएँ तीन प्रकार की होती हैं, अर्थात् आत्मजात (innate), स्वरचित अथवा कल्पना-रचित और बाह्य जगत् से उत्पन्न। परन्तु इन सब प्रकार की भावनाओं में आत्मजात भावनाएँ प्रमुख हैं और सभी आत्मजात भावनाओं में एक ऐसी भावना होती है, जो अति महत्त्वपूर्ण मालूम होती है। इसी अति महत्त्वपूर्ण आत्मजात भावना का सम्बन्ध एक ऐसी सत्ता से है, जो शाश्वत, पूर्ण, सर्वज्ञानी, सर्वव्यापक है, सभी सत्यता और अच्छाई का धाम है। इस भावना की व्याख्या किस प्रकार की जाय? यदि पूर्ण सत्ता की भावना हमारे अन्दर हो तो इस भावना को किस शक्ति ने हमारे अन्दर उत्पन्न किया है? कम-से-कम कार्य के बराबर ही कारण को भी सबल होना चाहिए। मैं इस भावना को अपने से नहीं रख सकता हूँ; क्योंकि मैं अपूर्ण हूँ। अतः इस पूर्ण सत्ता को भावना को पूर्ण तथा परम सत्ता ही ने मुझ में उत्पन्न किया है और इसलिए अवश्य ही पूर्ण और परम सत्ता, जिसे हम ईश्वर कहते हैं वास्तविक सत्ता है।

ईश्वर के अस्तित्व के उपर्युक्त प्रमाण को कारणिक या कारण-सम्बन्धी (casual) प्रमाण कहते हैं; क्योंकि यह परम सत्ता की भावना के कारण कार्य-सिद्धान्त पर आधारित है। इस कारणिक प्रमाण के अतिरिक्त देकार्त ने विश्व-सम्बन्धी (cosmological) प्रमाण भी दिया है। इस प्रमाण के अनुसार हमें जानना है कि किसने मेरी, मेरे माता-पिता तथा अन्य वस्तुओं की रचना की है।

---

* Idea और concept के बीच प्रायः अन्तर किया जाता है। Concept विशेषतया जाति के प्रति भावना को कहते हैं। अतः भावना प्रत्यय (concept) से अधिक व्यापक है। यथासंभव 'भावना' को idea के लिए और 'प्रत्यय' को 'concept' के लिए काम में लाया गया है। परन्तु इस भेद को ध्यान में रखना कठिन है।

Scanned with CamScanner

स्वयं मैं अपना सृष्टिकर्ता नहीं हो सकता हूँ। यदि मैं अपनी सृष्टि स्वयं करता तो मैं अपने को पूर्ण बनाता; क्योंकि मुझमें पूर्णता (perfection) की भावना है। फिर यदि मैं अपनी सृष्टि स्वयं करता तो इससे स्पष्ट होता है कि मैं अपनी सृष्टि से पूर्व होता, तभी तो मैं अपने को रचता? अतः, यह अमान्य है कि मैंने अपनी सृष्टि की है। तो क्या मेरे माता-पिता ने मेरी सृष्टि की है? यह भी ठीक नहीं है, क्योंकि वे मेरे जीवन की पूरी संरचना नहीं कर सकते, और फिर तो यह प्रश्न उठता है कि उन्हें किसने पैदा किया है? अतः माता-पिता को अपना सृजनहार मान लेने से सृष्टि-सम्बन्धी समस्या एक पग पीछे अवश्य टल जाती है, पर इससे इसका समाधान नहीं होता है। अतः, मेरी, मेरे माता-पिता तथा अन्य वस्तुओं की सृष्टि सम्बन्धी समस्या का समाधान हम यदि अनवस्था-दोष से बचकर करना चाहें तो मानना पड़ेगा कि एक स्वयम्भू, पूर्ण ईश्वर है, जिसने विश्व की सभी वस्तुओं की सृष्टि की है।

परन्तु *देकार्त* के 'कारणिक' तथा विश्व-सम्बन्धी प्रमाण में कोई विशेषता नहीं है। यदि इनके द्वारा दिये गये प्रमाण में कोई विशेषता है तो तात्त्विक या तत्त्वसम्बन्धी (ontological) प्रमाण है। इस तात्त्विक प्रमाण के अनुसार भावना और तदनुरूप अस्तित्व (existence) में अवियोज्य सम्बन्ध है। इस प्रमाण के सार को इस प्रकार दिखाया जा सकता है:—

हमारे अन्दर पूर्ण सत्ता की भावना है और फिर तो अनुरूप पूर्ण सत्ता का अस्तित्व भी अवश्य होना चाहिए। यदि पूर्ण सत्ता की भावना काल्पनिक रचना-मात्र हो, अर्थात् उसके अनुरूप कोई वास्तविक सत्ता न हो तो उस काल्पनिक भावना को पूर्ण सत्ता की भावना नहीं कहा जा सकता। अनुरूप वास्तविक सत्ता के अभाव का मतलब ही हो जाता है पूर्णता की कमी। पूर्णता और अभाव दोनों एक साथ नहीं हो सकते। इस प्रकार पूर्ण सत्ता की भावना दो तरह की हो सकती है—(1) उस पूर्ण सत्ता की भावना जिसके अनुरूप वास्तव में पूर्ण सत्ता है, और (2) उस पूर्ण सत्ता की भावना, जिसके अनुरूप वास्तव में कोई सत्ता है नहीं। *देकार्त* का कहना है कि वही पूर्ण सत्ता की भावना, वस्तुतः 'पूर्ण सत्ता की भावना' है, जिसके अनुरूप सत्ता का भाव भी है, अर्थात् जिसका अस्तित्व है। जिसके अनुरूप सत्ता का भाव नहीं है, या अस्तित्व नहीं है, अर्थात् जो काल्पनिक रचना-मात्र है, 'वह पूर्ण सत्ता की भावना' नहीं है, क्योंकि अवास्तविक सत्ता अपूर्ण होती है। पूर्ण सत्ता को अवास्तविक समझना, उसे अस्तित्वहीन मानना आत्मविरोध के सिवा और कुछ नहीं है। *देकार्त* ने ज्यामिति से उदाहरण देते हुए इसकी पुष्टि की है। यदि कोई त्रिभुज है तो मानना ही पड़ेगा कि उसके तीनों कोणों का योग दो समकोण के बराबर होगा। ऐसा होना अनिवार्य है। इसमें कोई आनाकानी नहीं हो सकती। किसी आधार को सत्य मानकर नियमानुकूल उसके व्युत्पन्न निष्कर्ष को असत्य करार नहीं दिया जा सकता। दूसरे शब्दों में, यदि हम कोण, त्रिभुज और ज्यामिति की परिभाषा को स्वीकार कर लें तो हमें यह भी स्वीकार करना पड़ेगा कि त्रिभुज के तीनों कोणों का योग दो समकोण के बराबर होगा। ठीक उसी प्रकार 'पूर्ण सत्ता की भावना' अगर हम स्वीकार कर लेते हैं तो हमें अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा कि पूर्ण सत्ता वास्तविक है, उसका अस्तित्व है। इसलिए पूर्ण सत्ता का अस्तित्व इसकी भावना से अनिवार्य रूप से सिद्ध होता है।

देकार्त का तात्त्विक प्रमाण मध्ययुगीन *अन्सेल्म* की युक्ति से बहुत मिलता है। इसलिए आलोचकों ने *देकार्त* के तात्त्विक प्रमाण को *अन्सेल्म* की नकल कहा है। अतः, हमें इन दोनों की युक्तियों को संक्षेप में दिखला देना चाहिए। *अन्सेल्म* का प्रमाण इस प्रकार है, *"यह सर्वमान्य है कि ईश्वर-भावना सभी प्रत्ययों में सर्वोच्च है। अब वह जो केवल विचार में ही सत्य हो उससे उच्चतर वह है, जो विचार और यथार्थ दोनों में सत्य हो। अतः, ईश्वर सर्वोच्च होने के कारण विचार और यथार्थ दोनों में है। इसलिए ईश्वर यथार्थ में परम सत्ता है।* अब *देकार्त* के अनुसार *अन्सेल्म* की युक्ति ईश्वर की वास्तविकता को सर्वोच्च प्रत्यय पर आधारित कर देती है, अर्थात् ईश्वर का अस्तित्व मानव-भावना पर निर्भर हो जाता है। परन्तु *देकार्त* का कहना है कि इनकी युक्ति

Scanned with CamScanner

के अनुसार ईश्वर के भाव या अस्तित्व पर ईश्वर-भावना निर्भर करती है, अर्थात् ईश्वर इसलिए नहीं है कि उसकी भावना है, पर हममें उसकी भावना इसलिए है कि वह वास्तविक सत्ता है। देकार्त की ईश्वर-सम्बन्धी युक्ति इस प्रकार है, *'जिस किसी वस्तु के तत्त्व या सार (essence) तथा रूप (form) को हम स्पष्टतया तथा परिस्पष्टतया देखते हैं कि वह उस वस्तु में है तो हम उस वस्तु के प्रति उस तत्त्व तथा परिस्पष्ट रूप का विधान कर सकते हैं।'* अब हम स्पष्ट तथा परिस्पष्ट रूप से देखते हैं कि वास्तविकता ईश्वर के रूप में ही निहित है। इसलिए उचित रीति से हम ईश्वर के अस्तित्व को मान ले सकते हैं।''*

Scanned with CamScanner